

# Janm Diwas Puja

Date : 30th March 1990  
Place : Delhi  
Type : Puja  
Speech : Hindi  
Language

## CONTENTS

### I Transcript

Hindi	02 - 08
English	-
Marathi	-

### II Translation

English	09 - 14
Hindi	-
Marathi	15 - 20

# ORIGINAL TRANSCRIPT

## HINDI TALK

आज नवरात्रि की चतुर्थी है और नवरात्रि को आप जानते हैं रात्रि को पूजा होनी चाहिए। अन्धःकार को दूर करने के लिए अत्यावश्यक है कि प्रकाश को हम रात्रि में ही ले आए। आज के दिन का एक और संयोग है कि आप लोग हमारा जन्मदिन मना रहे हैं।

आज के दिन गौरी जी ने अपने विवाह के उपरान्त श्री गणेश की स्थापना की। श्री गणेश पवित्रता का स्रोत हैं। सबसे पहले इस संसार में पवित्रता फैलाई गई जिससे कि संसार में आए मनुष्य पावित्र्य से सुरक्षित रहें और अपवित्र चीजों से दूर रहें। इसलिए सारी सृष्टि को गौरी जी ने पवित्रता से नहला दिया। और उसके बाद ही सारी सृष्टि की रचना हुई।

तो जीवन में सबसे महत्वपूर्ण कार्य यह है कि हम अपने अन्दर पावित्र्य को सबसे ऊंची चीज़ समझें। लेकिन पावित्र्य का मतलब यह नहीं कि हम नहाएँ, धोएँ, सफाई करें, अपने शरीर को ठीक करें किन्तु अपने हृदय को स्वच्छ न कर सकें। हृदय का सबसे बड़ा विकार है क्रोध। क्रोध आ जाता है तो जो पावित्र्य है वो नष्ट हो जाता है क्योंकि पावित्र्य का दूसरा नाम निर्व्याज्य प्रेम है। वो प्रेम जो सतत बहता है और कुछ भी नहीं चाहता। उसकी तृप्ति उसी में है कि वो बह रहा है और जब नहीं बह पाता तो वह परेशान होता है। सो पावित्र्य का मतलब यह है कि आप अपने हृदय में प्रेम को भरें, क्रोध को नहीं। क्रोध हमारा तो शत्रु है ही लेकिन वो सारे संसार का शत्रु है। दुनिया में जितने युद्ध हुए, जो भी हानियाँ हुई हैं ये सामूहिक क्रोध के कारण हुई। क्रोध के लिए बहाने बहुत होते हैं। मैं इसलिए नाराज हो गया क्योंकि ऐसा था, मैं उस लिए नाराज हो गया क्योंकि वैसा था। हर क्रोध का कोई न कोई बहाना मनुष्य ढूँढ सकता है लेकिन युद्ध जैसी भयंकर चीज़ें भी इसी क्रोध से ही आती हैं। उसके मूल में क्रोध ही होता है। अगर हृदय में प्रेम हो तो क्रोध नहीं आ सकता और अगर क्रोध का दिखावा भी होगा तो भी वो प्रेम के लिए। किसी दुष्ट राक्षस को जब संहार किया जाता है तो वो भी उस पर प्रेम करने से ही होता है क्योंकि वो इसी योग्य है कि उसका संहार हो जाए जिससे वो और पाप कर्म न करे। लेकिन ये मनुष्य का कार्य नहीं। ये तो देवी का कार्य है जो इन्होंने नवरात्रि में किया।

तो, हृदय को विशाल करके हृदय में ये सोचें कि हम किससे ऐसा प्रेम करते हैं जो निर्व्याज्य, निर्मम है, जिसके प्रति हमें ये नहीं कि 'ये मेरा बेटा है, ये मेरी बहन है, मेरा घर है।' ऐसा प्रेम हम किससे करते हैं? किसके प्रति हमें ऐसा प्रेम है। मनुष्य की जो स्थिति है उससे बहुत ऊंची स्थिति में आप आ गये हैं क्योंकि आप सहजयोगी हैं। आपका योग परमेश्वर की इस सूक्ष्म शक्ति से हो गया है। वो शक्ति आपके अन्दर बह रही है। आपको प्लावित कर रही है, आपको सम्भाल रही है, आपको उठा रही है। बार-बार आपको प्रेरित करती है, आपका संरक्षण करती है और आपको आह्लाद, मधुमय प्रेम से भर देती है। ऐसी सुन्दर शक्ति से आपका योग हो गया किन्तु अभी भी हमारे हृदय में उसके लिए कितना स्थान है? ये देखना होगा। हमारे हृदय में माँ के प्रति तो प्रेम है ये तो बात सही है। माँ से

तो सबको प्यार है और उस प्यार के कारण आप लोग आनन्दित हैं, बहुत आनन्द में हैं। किन्तु दो प्रकार का प्रेम और होना चाहिए। तभी माँ का प्रेम हो सकता है।

एक तो प्यार अपने से हो कि हम सहजयोगी हैं, हमने सहज में शक्ति प्राप्त की लेकिन अब हमें किस तरह से बढ़ना चाहिए। बहुत से लोग सहजयोग के प्रसार के लिए बहुत कार्य करते हैं जिसे हम कहें क्षितिजीय प्रसार। पृथ्वी से समानान्तर, चारों तरफ फैलता हुआ। वो लोग अपनी तरफ नजर नहीं करते तो उत्थान की गति को नहीं प्राप्त होते। बाह्य में बहुत कुछ कर सकते हैं। बाह्य में दौड़ेंगे, बाह्य में काम करेंगे, कार्यान्वित होंगे। सबसे मिलेंगे-जुलेंगे। लेकिन अन्दर की शक्ति को नहीं बढ़ाते।

बहुत से लोग हैं अन्दर की शक्ति की ओर ज्यादा ध्यान देते हैं और बाह्य की शक्ति की तरफ नहीं। तो उनमें सन्तुलन नहीं आ पाता और जब लोग बाह्य की ओर बढ़ने लग जाते हैं तो उनकी अन्दर की शक्ति क्षीण होने लग जाती है, और क्षीण होते-होते ऐसे कगार पर पहुँच जाते हैं कि फौरन अहंकार में ही डूबने लगते हैं। सोचते हैं कि देखिये हमने कितना सहजयोग का कार्य किया। हम सहजयोग के लिए कितनी मेहनत कर रहे हैं और फिर ऐसे लोगों का नया जीवन शुरू हो जाता है जो कि सहजयोग के लिए बिल्कुल उपयुक्त नहीं। और वो अपने को सोचने लगते हैं कि हम बहुत भारी एक अगुआ हैं और हमारा बहुत महत्व होना चाहिए। जैसे कि जिसे स्व-महत्व कहते हैं। हर जगह देखते हैं कि हमारा महत्व होना चाहिए, हर चीज़ में वो कोशिश करेंगे कि अपना महत्व दिखाएं, अपनी विशेषता दिखाएं, अपने को सामने करें लेकिन अन्दर से खोखलापन आता है। उसके बाद हठात देखते हैं कि उनको कोई बीमारी हो गयी, पगला गये वो। कुछ बड़ी भारी आफत आ गयी, तो फिर कहते हैं कि, माँ हमने तो आपको पूरी तरह समर्पित किया हुआ है, तो फिर ये कैसे हो गया, हमने कैसे पाया, ये गड़बड़ कैसे हो गयी। इसकी जिम्मेदारी आप ही के ऊपर है कि आप बहकते चले गये। फिर ऐसे आदमी एकतरफा हो जाते हैं। वो दूसरों से सम्बन्ध नहीं रख पाते। उनका सम्बन्ध इतना ही होता है कि हम किस तरह से रौब झाड़ें लोगों पर और किस तरह से दिखाएं कि हम कितने ऊँचे इन्सान हैं। और वो दिखाने में ही उनको महत्व नहीं दिया तो गलती हो गयी। यहाँ तक हो जाएगा कि उसमें ये भूल ही जाएंगे कि माँ का भी कुछ करने का है। माँ के लिए भी कुछ दान देना है। इसी प्रकार मैं देखती हूँ कि राहुरी जैसी जगह, बम्बई में हर जगह इस तरह के कुछ लोग एकदम से उभर कर ऊपर आ गये और वो अपने को बहुत महत्वपूर्ण समझने लगे। वहाँ तो आरती भी नहीं होती थी और नसीब हमारा, वहाँ फोटो तो रहता था लेकिन फोटो पोछने की भी किसी को इच्छा नहीं थी। नसीब अपने कि स्वयं का फोटो नहीं लगाया। अपना ही महत्व, अपनी ही डींग मारना और वो डींग मार-मार के अपने को बहुत ऊँचा समझने लगे दूसरों से। अलग किसी से कुछ पूछना नहीं। कुछ नहीं हम ही करेंगे। फिर झगड़े शुरू हो गये। झगड़े शुरू होने पर ग्रुप बन गये। क्योंकि जिस सूत्र में आप बंधे हुए हैं वो आपके माँ का सूत्र है और उसी सूत्र में आप बंधे हुए हैं वो आपके माँ का सूत्र है और उसी सूत्र में अगर आप बंधे रहे और पूरे समय ये जानते रहे कि हम एक ही माँ के बच्चे हैं, न हममें कोई ऊँचा है न कोई नीचा, न ही हम कोई कार्य को करते हैं। ये चैतन्य ही सारा कार्य करता है, हम कुछ करते ही नहीं हैं। ये भावना ही जब छूट गयी और ये कि हम इतने बड़े हैं हम ने ये किया, हम ये करेंगे, वो करेंगे, तब फिर चैतन्य कहता है कि तुझे जो कुछ करना है वो कर, जहाँ जाना है जा। जाना है तुझे नर्क में तो नर्क में जा। तुझे अपने को

मिटा लेना है मिटा ले। अपना सर्वनाश करना है, वो भी कर ले। जो तुझे करना है वो तू कर। वो फिर आपको रोकेगा नहीं क्योंकि आपकी स्वतन्त्रता वो मानता है। आप नर्क में जाना चाहें तो उसकी भी व्यवस्था है। पर सहजयोग में एक और बड़ा दोष है।

एक बहुत बड़ा दोष है कि हम एक सामूहिक, विराट शक्ति हैं। हम अकेले नहीं हैं। सब एक ही शरीर के अंग-प्रत्यंग हैं। उसमें अगर एक इन्सान ऐसा हो जाए या दो-चार ऐसे हो जाएं जो अपना-अपना समूह बना लें तो जैसे कैन्सर के जहर का एक कीटाणु ही बढ़ने लग जाता है वैसे ही एक आदमी बढ़ कर के और सारे सहजयोग को ग्रस्त कर सकता है। और हमारी सारी मेहनत व्यर्थ जा सकती है। हमको तो चाहिए कि समुद्र से सीखें कि जो सबसे नीचे रहकर के ही सब चीज़ को, सब नदियों को अपने अन्दर समाता है बगैर समुद्र के तो ये सृष्टि चल नहीं सकती। अपने को तपा कर के बाष्प बना कर के दुनिया में बरसात की सौगात भेजता है। उसकी जो नम्रता है, वही उसकी गहराई का लक्षण है और उस नम्रता में कोई ऊपरी नम्रता नहीं कि नमस्ते भाईसाहब! नमस्ते कुछ नहीं सबसे नीचे, सबको ग्रहण करके, सबको अपने अन्दर लेकर, सबको शुद्ध करके और फिर भाप बना कर बरसात करना। और फिर वही बरसात नदियों में पड़कर दौड़ती हुई समुद्र की ओर दौड़ेगी और इस समुद्र की पहचान, अगर आप किसी समुद्र के किनारे गए हों तो देखिए कि वहाँ जितने भी नारियल के पेड़ हैं वो सब समुद्र की ओर ही झुके हुए हैं। इतनी जोर की आँधी चलती है, कुछ भी हो जाए लेकिन वो कभी भी समुद्र से दूसरी ओर मुड़ते नहीं क्योंकि वो जानते हैं कि ये समुद्र है। इस समुद्र के समान ही अपना हृदय विशाल तब होगा जब हमारे अन्दर अत्यन्त नम्रता और प्रेम आ जाएगा। लेकिन अपना ही महत्व करना, अपने को ही विशेष समझना, ये जो चीज़ है इसमें सबसे बड़ी खराबी यह है कि परम चैतन्य आपको काट देगा। तुमको तुम्हारा महत्व है, तुम जाओ। और फिर जैसे कोई नाखून काट कर फैंक देता है इस तरह से आप एक तरफ फेके जाएंगे। जो मेरे लिए तो बड़ी दुःखदायी बात होगी। और दो-चार लोग और ऐसे निकल आए जो सोचें कि हम बहुत काम करते हैं, हमने ये कार्य किया हमने वो कार्य किया, उनको फौरन ठण्डा हो जाना चाहिए। पीछे हटकर देखना चाहिए कि क्या हम ध्यान करते हैं? हमारा ध्यान लगता है? हम कितने गहरे हैं? और फिर हम किसको प्यार करते हैं? किस-किस को प्यार करते हैं? कितनों को प्यार करते हैं? कितनों से दुश्मनी लेते हैं। सहजयोग में कुछ लोग बड़े गहरे बैठ गये हैं, बहुत गहरे आ गये हैं इसमें कोई शंका नहीं। और बहुत से अभी भी किनारे पर डोल रहे हैं। और फिर वो कब फेकें जाएंगे कह नहीं सकते।

मैंने आपसे पहले ही बताया है कि १९९० साल के बाद एक नया आयाम खुलने वाला है। और एक छलांग आपको मारनी होगी जो आप इस स्थिति से निकल कर उस नयी चीज़ को पकड़ लेंगे। जैसे कि चक्का है जब घूमता है तो एक बिन्दु पर आकर आगे सरक जाता है इसी प्रकार सहजयोग की प्रगति भी सामूहिक होने वाली है और इसमें टिकने के लिए पहली चीज़ हमारे अन्दर पावित्र्य होना चाहिए जो नम्रता से भरा हो। वैसे तो आपने दुनिया में बहुत से लोग देखे हैं जो अपने को बड़ा पवित्र समझते हैं। सुबह-शाम सन्ध्या करते हैं और किसी को छूने नहीं देते। ये खाना नहीं खाएंगे, वो आयेगा तो कहेंगे कि, 'तुम दूर बैठो,' उनको छू लिया तो उनकी हालत खराब। ये पागलपन है अगर आप एकदम स्वच्छ हैं, पवित्र हैं तो आपको किसी को छूने में, बात करने में, अपवित्रता आनी ही नहीं चाहिए क्योंकि आपका स्वभाव ही शुद्ध करने का है। आप हर चीज़ को ही शुद्ध करते हैं तो आप

जिससे मिलेंगे आप उसी को शुद्ध करते जाएंगे। उसमें डरने की कौनसी बात है? उसमें किसी को ताड़ने की कौन सी बात है? उसमें कानाफूँसी करने की कौन सी बात है? तो ये तो लक्षण एक ही है कि आपकी स्वयं की पवित्रता कम है। अगर आपकी पवित्रता सम्पूर्ण है तो उस पवित्रता में भी शक्ति और तप है और वो इतना शक्तिशाली है कि वो कोई भी अपवित्रता को भी खींच सकता है। जैसे मैंने कहा कि हर तरह की चीज़ समुद्र में एकाकार हो जाती है। अब दूसरे लोग हैं जो सिर्फ अपनी ही प्रगति की सोचते हैं। जैसे मैंने कहा कि हर तरह की चीज़ समुद्र में एकाकार हो जाती है।

अब दूसरे लोग हैं जो सिर्फ अपनी ही प्रगति की सोचते हैं। वो ये सोचते हैं कि हमें दूसरे से क्या मतलब? हम अपने कमरे में बैठ कर माँ की पूजा करते हैं, उनकी आरती करते हैं। ऐसे लोग भी बढ़ नहीं सकते क्योंकि आप एक ही शरीर के अंग-प्रत्यंग हैं। समझ लीजिए कि एक अंगुली ने अपने को बाँध लिया और कहेगी कि मुझे किसी और से कोई मतलब नहीं। अलग से रहूँगी। ये तो अंगुली मर जाएगी। क्योंकि इसमें रक्त कहाँ से आएगा? इसमें नस कैसे चलेगी? इसमें चेतना का संचार कैसे होगा? ये तो कटी हुई रहेगी। आप एक बार इसे बाँध कर देखिए और पाँच दिन बाँधे रखिये। आप पाएंगे कि अंगुली काम ही नहीं करेगी। किसी काम की नहीं रह जाएगी। फिर आप कहेंगे कि, 'माँ, मैं तो इतनी पूजा करता हूँ इतने मन्त्र बोलता हूँ, मैं तो इतना कार्य करता हूँ, फिर मेरा हाल ऐसा क्यों है।' क्योंकि आप विचलित हैं। आप हट गए हैं, उस सामूहिक शक्ति से आप हट गए हैं। सहजयोग सामूहिक शक्ति है। इस सामूहिकता से जहाँ आप हट गए वहीं पर आप अलग हो गए उस सामूहिक शक्ति से। तो दोनों ही चीज़ की तरफ आपको ध्यान देना है कि हम अपनी शक्ति को भी सम्भालें और सामूहिकता में रचते जाएं। तभी आपके अन्दर पूरा सन्तुलन आ जाएगा। लेकिन बाह्य में आप बहुत कार्य करते हैं।

मैंने ऐसे लोग देखे हैं जो सहजयोग के लिए बहुत कार्य करते हैं और काफी अच्छे भाषण देते थे। उनके भाषणों की उन्होंने फिर टेप बना ली। फिर लोगों से कहने लगे कि आप हमारे टेप सुनो। तो लोग हमारे टेप छोड़कर उन्हीं की टेप सुनते थे। और उनका यह हाल था कि जैसे आज के दिन हम यहाँ बैठे हैं, हमारे फोटों को तो नमस्कार करते थे, हमें नहीं करेंगे क्योंकि उनको फोटो की आदत पड़ी हुई है। हमसे उन्हें कोई मतलब नहीं। उन्हें फोटो से मतलब है। ऐसे-ऐसे विक्षिप्त लोग हमने देखे हैं। फिर उन्होंने अपने फोटो छपवाए और फोटो सबको दिखा रहे हैं कि हम वैसे हैं, कैसे हैं। इस तरह वे अनेक तरीकों से अपने ही महत्व को बढ़ाते हैं। करते-करते ऐसे खड्डे में गिर गए। अनायास उनके समझ में नहीं आया और एकदम पता चला कि सहजयोग से छूट गये। कहीं भी नहीं है। लोग मुझे कहते हैं कि माँ वो तो बड़े अगुआ थे, ये थे। हाँ, थे तो सही लेकिन वे गये कहाँ सहजयोग से। क्या करें! एकदम काफूर हो गए। कहाँ? पता ही नहीं। तो ऐसे लोग क्यों निकल गए क्योंकि सन्तुलन नहीं और जब सन्तुलन नहीं रहता है तो आदमी या तो बायें में चला जाएगा या दायें में चला जाएगा। और जैसा मैंने कहा कि दो तरह की शक्तियाँ हमारे अन्दर हैं जिससे हम सहजयोग की ओर खिंचते भी हैं और फैंक भी दिए जाते हैं। एक रस्सी में अगर आप पत्थर बाँध कर घुमायें तो पत्थर घूमता रहेगा, जब तक रस्सी से बंधा है। जैसे ही रस्सी से छूट जाएगा, दूर फैंका जाएगा। इसी प्रकार बहुत से लोग सहजयोग से निकल गए। और फिर लोग कहते हैं 'देखिये माँ, सहजयोग में बहुत से लोग कम हो गए हैं।' मैं क्या करूँ? और अगर कम हो गये हैं तो उसमें सहजयोग का कोई नुकसान नहीं

हुआ है। इसमें उनका ही नुकसान हुआ है। सहजयोग का बिल्कुल भी नुकसान नहीं हुआ है। क्योंकि जिसको नुकसान या फायदे से कोई मतलब ही नहीं, ऐसी जो चीज़ है उसका क्या नुकसान हो सकता है? हाँ अगर आपको अपना फायदा करा लेना है तो आप इस चीज़ को जान लीजिए की सहजयोग को आपकी जरूरत नहीं है, आपको सहजयोग की जरूरत है।

‘योग’ का दूसरा अर्थ होता है युक्ति। एक तो है कि सम्बन्ध जुड़ जाना, दूसरा है युक्ति। ये युक्ति समझ लेनी चाहिए। ये युक्ति क्या है? इसमें तीन तरह से समझाया जा सकता है। पहली तो ये है कि हमें इसका ज्ञान आ जाना चाहिए। ज्ञान का मतलब बुद्धि से नहीं। किन्तु हमें अंगुलियों में, हाथ में, और अन्दर से कुण्डलिनी का पूरी तरह जागरण होना ये ज्ञान है और जब ये ज्ञान हो जाता है तब और भी ज्ञान होने लग जाता है। बहुत सी बातें जो आप नहीं समझ पाते थे वह आप समझ पा रहे हैं। और आप समझने लग जाते हैं कि कौन सत्य है कौन असत्य। इस ज्ञान के द्वारा आप लोगों की कुण्डलिनी भी जागृत कर सकते हैं और उनको समझा सकते हैं। उनसे आप पूरी तरह से एकाग्र हो सकते हैं। उनके साथ आप वार्तालाप कर सकते हैं इस ज्ञान के कारण। तो आपको बौद्धिक ज्ञान भी आ जाता है। आप सहजयोग समझते हैं। कोई समझता था पहले? ‘ईड़ा, पिंगला, सुखमन नाड़ी रे, एक ही डोर उडाऊ रे’ पहले नानक की कोई बात समझता था? या ज्ञानेश्वर की कोई बात समझता था पहले? कोई रहस्यमय चीज़ या गोपनीय बात कह रहे हैं ऐसे समझ कर लोग रख देते थे। लेकिन सहजयोग के बाद आप सब समझने लगे। तो आपका बुद्धि चातुर्य भी बढ़ गया। उसकी भी चतुरता आ गयी। आप उसको समझने लग गये। ये तो बात ठीक है कि आप उसे समझने लग गये। और ऐसी बातें जो अगम्य थी गम्य हो गई और सब बातों को आप जानने लग गये। सो तो एक युक्ति हो गयी कि आपने अपना ज्ञान बढ़ा लिया।

अब दूसरी युक्ति क्या है? वो है जो कि आप हमारे प्रति भक्ति करें। उस भक्ति को भी जब आप करते हैं तब आपको अनन्य भक्ति करनी चाहिए। आप हमसे तदाकारिता प्राप्त करें। जैसे हम सोचते हैं वैसा ही आप सोचने लग जायें। आज देर हो गयी समझ लीजिए तो हम कह सकते थे कि आज बहुत देर हो गयी थी, हम थक गये हैं। लेकिन हमने ये सोचा कि नवरात्रि है, रात में ही करना है और यही मुहूरत हमें मिलना था, यही मूहूर्त है, इसी वक्त ये पूजा होनी चाहिए। और ये होना ही चाहिए, होना ही है और बड़े आनन्द से हम कर रहे हैं। क्योंकि शुभमूहूर्त यही है। और हमें सहज होना चाहिए। उसके बारे में सोचते भी नहीं। थक गये या आराम भी नहीं किया, कुछ भी नहीं। यही मूहूर्त है। जैसे एक योद्धा अगर लड़ाई में गया है और देखा कि दुश्मन खड़ा है, यही समय उसको मारने का है, उसी वक्त उसे मारना चाहिए। तो हम बैठे हैं और आपको भी यही सोचना चाहिए कि यही समय माँ ने बाँधा है। यही समय हमारे लिए उचित है, दूसरा नहीं। इसी वक्त पूजा करनी चाहिए। लेकिन जो आधेअधूरे लोग हैं वो सोचते हैं कि, ‘हम सबेरे से आकर बैठे हैं, हमने ये किया, हमें भूख लग गयी, खाना नहीं खाया, बच्चे रो रहे होंगे’ तो वो अनन्य भक्ति नहीं हुई क्योंकि मेरा जो सोच-विचार है आपके सोच-विचार में नहीं आया। मैं जैसे सोचती हूँ वैसा वो नहीं सोचते। किसी के लिए भी मैं सोचती हूँ। कभी-कभी ‘माँ ये आदमी इतना खराब है।’ मैं कहती हूँ कि, ‘नहीं, बिल्कुल अच्छा है, बढ़िया आदमी है।’ कैसे कहा आपने? सोचती हूँ कि जो मैं देख रही हूँ ये क्यों नहीं देखते? अगर ये वैसे ही हो जाते हैं तो इन्हें वो ही देखना चाहिए, जो मैं देखती हूँ। वैसी तो बात नहीं, ये तो कुछ



और ही देख रहे हैं। तो अनन्य नहीं हुए, अन्य हो गये।

उसी प्रकार हमारा प्यार आपके प्रति है। और एक ही चीज़ से हम तृप्त होते हैं कि आप सबके प्रति एक जैसा प्यार रखें। अगर वो बात आपके अन्दर नहीं है तो फिर लगता है अन्य है, अनन्य नहीं। अगर हमारे ही शरीर के ये अंग-प्रत्यंग हैं तो जो हम हैं वैसे ही इनको होना चाहिए, जैसे हम सोचते हैं वैसे ही उनको सोचना चाहिए, जैसा हम करते हैं वैसे ही उनको करना चाहिए। तो ये दूसरा क्यों करते हैं? ये उल्टी बात क्यों सोचते हैं? इनके दिमाग में ये सब अजीब-अजीब बातें कहाँ से आती है? सो अनन्य भक्ति नहीं हुई ये, अन्य हुई। तो आपका सोच-विचार और कार्य और आपका प्रेम वैसे ही होना चाहिए जैसा आप मुझसे प्रेम करते हैं। यही अगर प्रेम का स्रोत है तो जो कुएं में है वही घट में आना चाहिए। दूसरे चीज़ कैसे आ सकती है और जब कोई दूसरी चीज़ आती है तब मैं सोचती हूँ कि उन्होंने किसी दूसरे घट कुएं से पानी भरा। ये घट मेरा नहीं है।

अब तीसरी बात जो युक्ति है कि जब मैंने दूसरी बात आपको बताई कि आप अपने अन्दर एक अनन्य भक्ति रखें। माँ हम आपकी शरणागत हैं और जब शरणागत हैं तो जब हम कोई बात कह भी दें, या हम आपको कोई चीज़ समझा दें या कोई आपके सामने प्रस्ताव रखें, कुछ रखें तो उसका मना करने का सवाल ही कैसे उठेगा? अगर आप और हम एक हो गए तो उसका सवाल ही कैसे उठना चाहिए! माँ ने कह दिया तो ठीक है। हम तो माँ ही हो गए हैं तो हम नहीं कैसे कर दें। जैसे कि मेरी आँख आपको देख रही है तो मेरी आँख जाने की आप लोग बैठे हैं सामने क्योंकि मेरी आँख मेरी अपनी है। तो मैं जो जान रही हूँ उसमें और मेरी आँख के जानने में कोई भी अन्तर नहीं। एक ही चीज़ है। जो मैं बुद्धि से जान रही हूँ वही मैं अपनी आँख से भी जान रही हूँ। तब फिर आपमें तदाकारिता नहीं आती सो ये दूसरी युक्ति है कि, 'माँ, मेरे हृदय में आप आओ, मेरे दिमाग, विचार, जीवन के हर कण में आप आओ।' आप जहाँ भी कहोगे हम हाजिर हैं, हाथ जोड़कर। पर आपको कहना तो पड़ेगा न और पूर्ण हृदय से कहना होगा। किसी मतलब से अगर आप मुझसे सम्बन्ध जोड़ें तो भी वो ठीक नहीं। लेकिन अगर सम्बन्ध जुड़ गया तो सारे मतलब अपने आप ही पूरे हो जाएंगे। आपको कुछ करना ही नहीं पड़ेगा। अपने आप ही जब आपके सारे मतलब पूरे हो गये तो आपका चित्त उसी में लग जाएगा।

अब तीसरी जो बात है कि हम ये काम कर रहे हैं। हमने सहजयोग का ये काम किया, हमने ये सजावट की, ये ठीक-ठाक किया मैंने, तो सहजयोगी आप नहीं है। सहजयोग में आपके सारे कर्म अकर्म हो जाने चाहिए। मैं कुछ कर रहा हूँ, मैंने ये कविता लिखी, मैंने ये किया। ये जहाँ तक बारीक, सूक्ष्म में देखते जायें कि मैं सच में ऐसा सोचता हूँ क्या मैं ऐसा सोचता हूँ? क्या इसका मतलब यह है कि मेरा योग पूरा नहीं हुआ? जब योग पूरा हो जाता है तो फिर आप ऐसा नहीं सोचते। सोच ही नहीं सकते। अकर्ममय हो जाते हैं आप। ये हो रहा है, वो हो रहा है, घटित हो रहा है। वो सब हो रहा है, ऐसा बोलने लग जाते हैं और तब कहना चाहिए कि पूरी तरह से तदाकारिता आ गयी। अब मेरा हाथ है वो कुछ कार्य कर रहा है, वो थोड़े ही कहता है कि मैं कर रहा हूँ, उसको तो पता भी नहीं कि वो कर रहा है। वो तो हो ही रहा है। उसकी जितनी भी गति है, हम ही तो कर रहे हैं। तो समझ लें कि ये हाथ कट गया, इससे जुड़ा नहीं। अगर जुड़ा है तो उसे कभी लगेगा नहीं कि मैं कर रहा हूँ, पकड़ रहा हूँ कभी भी नहीं लगता। और जब आप ऐसा सोचते हैं कि 'मैं कर रहा हूँ,' तभी चैतन्य कहता है 'तू कर' और तब सबसे ज़्यादा गड़बड़ी

शुरू होती है। ये तीसरी युक्ति है, उस युक्ति को सीखना चाहिए कि क्या मैं कुछ कर रहा हूँ? एक क्षण विचार करें कि मैं कर रहा हूँ, मैं क्या कर रहा हूँ? जब तक आप प्रकाश ढूँढ़ रहे थे तब तक आप कुछ कर रहे थे क्योंकि आपके अन्दर अहम् भाव था। आप अकेले एक व्यक्ति थे, एक व्यष्टि में थे, अब आप समष्टि में, सामूहिकता में आ गये हैं। तब आप कुछ भी नहीं कर रहे थे। आप अंग-प्रत्यंग है और वह कार्य हो रहा है। ये तीसरी युक्ति है इसे समझें।

मैं इसलिए यह युक्तियाँ बता रही हूँ कि अब छलांगे जो लगानी है! इस तरह से आप अपना विवेचन हमेशा करते रहें। और अपनी ओर नजर रखें। इस वक्त भलाई इसमें है कि हम अपनी ओर नजर करें और अपनी ओर देखें कि क्या मैं ये सोचता हूँ कि वो मुझसे काफी श्रेष्ठ है और मुझे उनसे कुछ सीखना चाहिए। उसके कुछ अच्छे गुण मुझे दिखाई देते हैं कि बुरे गुण ही मुझे दिखाई देते हैं। दूसरों के अगर अच्छे गुण दिखाई दें और अपने बुरे गुण तो बहुत अच्छी बात है क्योंकि दूसरों के तो दुर्गुण आप हटा नहीं सकते। तो दूसरों ने क्या किया? दूसरे ऐसे हैं ऐसे सोचने वाले पूरी तरह योग में उतरे नहीं हैं। मेरे में क्या त्रुटि है? यह देखने से ही आप ठीक हो सकते हैं दूसरों को कहें कि तुम्हें अपना दोष ऐसा ठीक करना चाहिए और वहाँ के प्रधानमंत्री को जाकर कुछ अक्ल सिखायें तो वो हमें बन्दी कर लेंगे क्योंकि हमारे देश में तो हम कह सकते हैं क्योंकि ये हमारा देश है। इसी प्रकार हमें जानना चाहिए, इस युक्ति को समझ लेना चाहिए कि इसमें जो हम डावांडोल हैं वो हम अपनी ही वजह से हैं। सहजयोग तो एक बहुत बड़ी चीज़ है, बड़ी अभिन्न चीज़ है। लेकिन इसका जो हम पूरी तरह मजा नहीं ले पा रहे इसका मतलब हममें कोई खराबी है। और इस सबको इस युक्ति को अगर आपने सीख लिया तो मिलेगा क्या? सिर्फ आनन्द, निरानन्द और कुछ नहीं। और फिर चाहिए क्या आपकी शक्ति ही बदल जाएगी। आप आनन्द में ही बहने लग जाएंगे।

हमारे जन्मदिवस पर मैं चाहूँगी कि आज आपका भी जन्मदिवस मनाया जाए कि आज से हम इस युक्ति को समझें और अपने को इस पवित्रता से भर दें, जैसे श्री गणेश। और पवित्रता से ही मनुष्य में सुबुद्धि आती है क्योंकि पवित्रता प्रेम ही का नाम है। उसी से सुबुद्धि का मतलब भी प्रेम ही है। सब चीज़ का मतलब प्रेम है। और अगर आप सुबुद्धि को प्राप्त नहीं कर सकते, अगर आप प्रेम को अपना नहीं सकते तो सहजयोग में आने से आपका समय बर्बाद हो रहा है। इस वक्त ऐसा कुछ समां बंध रहा है कि सबको इसमें एकदम से एकाकार हो जाना चाहिए। अपने को परिवर्तन में डालना है, परिवर्तित हमें होना ही है। हम में खराबियाँ हैं, हमें अपने को पवित्र बना देना है। ये आप अपने साथ कितना प्रेम कर रहे हैं। आप का बच्चा जरासा गन्दा हो जाता है तो आप दौड़ कर उसे साफ कर देते हैं क्योंकि आपको उससे प्रेम है। उसी प्रकार जब आपको अपने से प्रेम हो जाएगा तो आप भी अपने को परिवर्तन की ओर लगायेंगे कि मेरा परिवर्तन कहाँ तक है। मेरे अन्दर अब भी यही खराबी रह गयी अब भी मैं ऐसा हूँ और इस परिवर्तन के फलस्वरूप जो आशीर्वाद हैं, उस जीवन का वर्णन नहीं किया जा सकता। जो कबीर ने कहा कि अब मस्त हुए फिर क्या बोलें। तो आप सब उस मस्ती में आ जाइये, उस मस्ती को प्राप्त करें और उस आनन्द में आप आनन्दित हो जायें।

ये हमारा आशीर्वाद है।



# ENGLISH TRANSLATION

## (Hindi Talk)

Scanned from English Divine Cool Breeze

Today is the fourth day of Navratra. To dispel darkness it is important that we bring in the light at night. Today is also special because you are celebrating my birthday. On this day Shri. Gauri had created Ganesha. Shri Ganesha is the epitome of Purity and Holiness. The first thing that was spread in this world was Purity, by which all born things and all humans be protected and may keep away from unholy things. After that only the rest of creation was created. So the most important work for us is to make Purity the highest thing within ourselves. Purity does not mean that we bathe, wash and keep ourselves clean. We should keep our hearts clean. The greatest malady of the heart is anger. When anger enters a person then all purity gets destroyed. Because the other name of Purity is Love which is completely clean and straight forward, that Love that flows eternally and wants nothing—Nirvajya. Its satisfaction is in the fact that it keeps flowing and when it cannot flow it becomes disturbed. Purity means that you fill your heart with love and not anger.

Anger is our enemy and also the enemy of the world. All the wars of this world, the failures have been due to this collective anger. There can be many excuses for anger. Even a terrible thing like war comes

from anger. If there is love in the heart, then anger cannot arise. And if one has to make a show of anger then even that is for love. Whenever any evil person or Raksha is killed, that is also done by the power of love because he was worthy of being destroyed, by which he may not commit more acts of sin. But this job is not for humans. It is the job of the Devi who had destroyed them during these Navratris.

So expand your heart and think whom do we love with this clean, straightforward and honest love, (NIRVAJYA) by which we do not think that this is my son, my sister, my house, and my things. You have risen to a very much higher level than the level of human beings. Because you are Sahaja Yogis, so your union is with this subtle Power of God's love. That power is flowing constantly through you and it is strengthening and coloring you with its power. It is looking after you, making you rise, and is inspiring you. It is filling you with joy and sweet love. You have got united to such a beautiful Power. We have to see how much place we have in our hearts for it. You have love for your Mother, but you should have the two other types of love also, then only can the love for your Mother be complete.

One type of love should be for yourself, that you are Sahaja Yogis. We have got these Powers in a Sahaj way. Now we have to see how to increase it. Many people do lot of work for spreading Sahaja Yoga. It is a horizontal movement. Such people do not look within themselves. So they are not able to get the vertical movement. On the outside they can do a lot, run around, do this work or that, meet people. But they do not increase the Power within. Now there are many people who pay more attention to the Power within but neglect the outward Shakti. So balance does not come to them. When people start developing on the outside only then the power within starts diminishing. And then ultimately they



get drowned in the Ego, that we have done so much for Sahaja Yoga, we have worked so hard. Then a new life starts for them which is not at all Sahaja. They get full of self importance and try to show their individuality. But from within they are empty. Then they get sick, go crazy or some great misfortune befalls them. Then they say 'But Mother, we had surrendered to you completely. Then how did this happen.' The responsibility lies with you, that you kept on getting lost. Such a person gets off to one side and he is not able to associate with others. If they associate with others then it is only to bully others and show their superiority. They must always be in the front and they must be given all the importance. Then they forget that they must do something for Mother. I have seen people who came up at once. Then they started feeling very superior and self important. Then there was no aarti performed there, nor wiping my photograph. They were full of themselves, and never consulted anyone. Then groups started and quarrels started.

The thread by which you are tied is your Mother's thread. You must always remain tied to that thread and remember that we are the children of Shri Mataji. No one is superior or inferior. Nor do we do anything. This Param Chaitanya is doing everything. When this feeling comes that we did, we will do this of that, we are very great, then the Param Chaitanya lets you do what you want. You can go to hell or destroy yourself. It won't stop you, because it respects your freedom.

There is another fault with Sahaja Yogis. We are a collective being. A one collective Virat Shakti. We are all one body. We are not by ourselves. In that body if one person or a few persons start making their own group, then like the malignancy of cancer, where one cell starts growing separately, in the same way one such person can grow and devour the whole of Sahaja Yoga. And all my efforts will go to waste.

We should learn from the ocean, which is the lowest and which gathers all the rivers into itself, then heats itself and becomes vapour and gives the blessing of rain to the whole world. Its humbleness is the sign of its depth. When we will become extremely humble and loving then only will we become large like the ocean. But if you think only of your self importance and superiority then the problem will be that the Param Chaitanya will cut off, and you will get thrown aside which is very painful to me. People who think I have done this or I have done that should immediately step into the background and see whether we meditate or not? Are we able to meditate? How deep are we? Whom all do we love and how many do we love. With how many are we enemies? Within Sahaja Yoga some people have gone very deep. And there are many who are still hanging on the edge. When they can be thrown out cannot be said.

I have said before that 1990 is a year which will open a new dimension. You have to take a great leap, by which you come out of these surroundings and grasp the new thing. The progress of Sahaja Yoga is about to complete twenty years. To survive the first thing we have to imbibe within ourselves is Purity, which is filled with Humbleness. If you are completely clean and Pure then you can touch anyone and you will never become impure, because you will purify everything. Your nature becomes that of purifying. Whomsoever you meet, you will purify that person. What is there to be frightened of or to condemn anyone. If your Purity is absolute then that Purity has Power and Brilliance and such a person is so powerful that he can suck any impurity.

Now some other people think only of their own progress. They think what have we got to do with others. We sit within our four walls and worship and follow Mother and we have nothing to do with the world. They remain cut off from others. But you are part and parcel of the whole.



one, then how can such a question arise? If mother has said, its alright. We are a part of Mother then how can we say no. Then you have not got that sameness (Tadakari) with me. So the next Yukti is "Mother please come into my head, please come into my heart, please come into my thoughts. Please come into each drop of my life." Whereever you say I will come. But you will have to say so from your heart and without any other motive.

When the thought comes I am doing this work, I have done so much for Sahaja Yoga, I have done this decoration, I put this alright, 'I did' then know that you are not a Sahaja Yogi. In Sahaja Yoga, all your Karmas become Akarma. (non doing). Then you will see that-Do I think like this? Why do I think that I am doing? Then it means that my union is not complete. When the union is complete then you become a non-doer. Then you start saying 'it is getting done.' Only then you get the Yukti of complete sameness with me.

The next Yukti you should understand is that I am not doing. Till you keep identifying with your body (are) doing some thing, because you have the ego within you. When you come into the collectivity then you stop doing anything. You are the part and parcel and that work is being done.

I am telling you these Yuktis because you have to take a leap. Always assess yourself in this maner. Look towards yourself and see what do I think. Do I think about others that they are better than me, so I must learn from them? Do I see the good points or the bad points in others? We must understand this Yukti that if you are still half-baked then it is due to your own self. Sahaja Yoga is a very great thing. But if something is wrong within us or we cannot enjoy it fully then the reason is that there is some defect within us. If you correct this Yukti then there is only joy. The Pure Joy — Neerananda and nothing else. Then what more do you want? Your whole countenance will change.

I want that on my Birthday, Your Birth Day should also be celebrated that you may understand these Yuktis, and may you fill your life with Purity and Holiness like Shri Ganesha. With Purity comes Wisdom. Because Purity is the name of Love, and Wisdom means Love. If you cannot get Wisdom and you cannot love, then it is no use wasting your time in Sahaja Yoga. Now such a time is coming that everyone has to become firmly settled and you have to change yourself, and must change. We have a lot of faults. We have to make ourselves completely pure. After this change you have the blessings of a life that cannot even be described. Kabir has said "When you are completely blissful then what more can you say." You all should now come into that Bliss (masti). And attain that state where you become blissful in that.

MAY GOD BLESS YOU.



# MARATHI TRANSLATION

## (Hindi Talk)

आज नवरात्रीची चतुर्थी आहे आणि नवरात्रीमध्ये रात्री पूजा झाली पाहिजे. अंधकार दूर करण्यासाठी रात्रीत प्रकाशाला आणणे अत्यावश्यक आहे. आजच्या दिवसाचा एक आणखी संयोग आहे, की आपण लोक आमचा जन्मदिवस साजरा करीत आहात.

आजच्या दिवशी गौरीजींनी आपल्या विवाहानंतर श्री गणेशाची स्थापना केली. श्री गणेश पावित्र्याचे स्रोत आहेत. सर्वप्रथम या जगामध्ये पवित्रता पसरवली गेली. ज्यामुळे जे प्राणी किंवा जे मानव या विश्वात आले ते पावित्र्यामुळे सुरक्षित रहावे आणि अपवित्र गोष्टींपासून दूर रहावे, यासाठी साऱ्या सृष्टीला गौरीजींनी पवित्रतेने न्हाऊन काढले आणि त्यानंतरच साऱ्या सृष्टीची रचना झाली.

तर, जीवनामध्ये आपल्यासाठी सर्वात महत्त्वपूर्ण कार्य हे आहे, की आपण आपल्यामधील पावित्र्याला सर्वात उच्च गोष्ट समजणे, पण पवित्र याचा अर्थ असा नव्हे, की आंघोळ करून शूचिर्भूत होऊन, सफाई करून आपल्या शरीराला ठीक करणे, तर आपल्या हृदयाला स्वच्छ केले पाहिजे. हृदयाचा सर्वात मोठा विकार आहे क्रोध आणि मनुष्य जेव्हा क्रोधित होतो तेव्हा जे पवित्र आहे ते नष्ट होऊन जाते कारण पावित्र्याचे दुसरे नाव आहे निर्व्याज्य प्रेम. ते प्रेम जे सतत वाहत असते आणि कशाचीही इच्छा करीत नाही. त्याची तृप्ती यातच आहे, की ते सतत वाहत आहे आणि ज्यावेळी ते वाहत नाही त्यावेळी ते चिंतीत (अस्वस्थ) होते, तर पवित्र याचा अर्थ असा की आपण आपल्या हृदयाला प्रेमाने भरून टाका. क्रोधाने नव्हे. क्रोध आपला शत्रू आहे, पण तो विश्वासाचा शत्रू आहे. जगात जेवढी युद्धे झाली, जेवढी हानी झाली, ती सर्व सामूहिक क्रोधाची कारणे आहेत. क्रोधासाठी कारणे अनेक असतात, 'मी अशासाठी नाराज झालो कारण असे होते.' प्रत्येक क्रोध कोणते तरी कारण शोधू शकतो. युद्धासारख्या भयानक गोष्टीसुद्धा क्रोधापासून उपजतात. त्यांच्या मुळामध्ये हा क्रोधच असतो. जर हृदयामध्ये प्रेम असेल तर क्रोध येऊ शकत नाही आणि क्रोधाचा देखावा असेल, तर तो प्रेमासाठीच. एखाद्या दुष्ट राक्षसाचा जेव्हा संहार केला जातो, तो सुद्धा त्याच्यावर प्रेम केल्यामुळेच होतो कारण तो या योग्यतेचाच असतो, की त्याचा संहार झाला पाहिजे, ज्यायोगे तो आणखी पापकर्म करणार नाही, पण हे कार्य मानवासाठी नाही. हे तर देवीचे कार्य आहे, जे त्यांनी ह्या नवरात्रामध्ये केले.

तर, हृदयाला विशाल करून हृदयात असा विचार करा की आम्ही कोणावर असे प्रेम करतो जे निर्व्याज्य, निर्मम आहे, ज्याबद्दल आमच्यामध्ये असे नाही की हा माझा मुलगा, माझी बहीण आहे, माझे घर, माझी वस्तू. मनुष्याची जी स्थिती आहे त्यापेक्षा आपण खूप उच्च स्थितीला आला आहात कारण आपण सहजयोगी आहात. आपला योग परमेश्वराच्या या प्रेमाच्या सूक्ष्म शक्तीशी झाला आहे. ही शक्ती आपल्या आतमध्ये अविरत वाहत आहे. आपल्याला प्लावित करीत आहे. आपल्याला सांभाळते आहे. आपल्याला तर उठवते आहे. वारंवार आपल्याला प्रेरित करते आहे. आपल्याला आल्हाददायी मधुमय प्रेमाने भरून देत आहे. अशा सुंदर शक्तीशी

आपला योग झाला, परंतु आता आमच्या हृदयात त्याच्यासाठी कितीसे स्थान आहे हे पाहिले पाहिजे. आपल्या हृदयात आईसाठी तर प्रेम आहे आणि त्या प्रेमासाठी आपण लोक खूप आनंदात आहात, पण अजूनही दोन प्रकारचे प्रेम असले पाहिजे, तरच आईचे पूर्णप्रेम असू शकते.

एक प्रेम स्वतःविषयी, की आम्ही सहजयोगी आहोत. आम्ही सहजयोगामध्ये शक्ती प्राप्त केली, पण आम्ही याला कशाप्रकारे वाढविले पाहिजे. अनेक लोक सहजयोगाच्या प्रसारासाठी पुष्कळ कार्य करतात. (हॉरीझॉन्टल मूव्हमेंट) समांतर चलन, पृथ्वीप्रमाणे चारही बाजूला पसरणारे. ते लोक स्वतःकडे दृष्टी फिरवत नाहीत, तर जे उर्ध्वगामी चलन आहे, त्याला उत्थानाची गती मिळत नाही. बाह्यामध्ये ते पुष्कळ काही करू शकतात. बाह्यामध्ये ते थांबतील, काम करतील, सर्वांना भेटतील, पण आतल्या शक्तीला वाढवू शकत नाहीत.

असेही अनेक लोक आहेत जे आतल्या शक्तीकडे खूप लक्ष देतात आणि बाहेरच्या शक्तीकडे नाही, तर त्यांच्यामध्ये संतुलन येत नाही आणि ज्यावेळी लोक बाह्याच्या अंगामध्ये जास्त वाढू लागतात तेव्हा त्यांच्या आतील शक्ती क्षीण होऊ लागते आणि असे होत होत अशा कडेला पोहोचते की लगेच अहंकारामध्ये बुडू लागतात, की आम्ही सहजयोगाचे एवढे कार्य केले आहे, इतकी मेहनत घेतली आहे, नंतर अशा लोकांचे एक नवीन जीवन सुरू होते, जे सहजयोगासाठी अजिबात उपयुक्त नाही. ते स्वतःबद्दल विचार करतात, की आमचे खूप महत्त्व असले पाहिजे, सेल्फ इंपॉर्टन्स. प्रत्येक गोष्टीमध्ये ते स्वतःचे महत्त्व दाखवतील. आपले विशेषत्व दाखवतील. स्वतःला पुढे करतील, पण आतून खिळखिळीतपणा आला आहे, मग त्यांना काही आजार झाला, वेडेपणाची लहर आली, काही मोठे संकट आले, की मग असे म्हणतात की, 'माताजी, आम्ही तर आपल्यावर स्वतःला पूर्णपणे समर्पित केले होते, मग असे कसे झाले?' याची जबाबदारी आपल्यावरच आहे की आपणच बहकलात. मग असा माणूस एकतर्फी होऊन जातो. तो दुसऱ्याशी संबंध प्रस्थापित करू शकत नाही. त्याचा संबंध फक्त लोकांवर रूबाब पाडण्यात असतो आणि स्वतःला उच्च दाखवणे, सर्वात पुढे आले पाहिजे, सगळ्यात त्यांचं महत्त्व असले पाहिजे, तर मग असेही होऊ शकते, की ते विसरून जाऊ शकतात, की श्री माताजींना सुद्धा काही करावयाचे आहे. त्यांना सुद्धा काही दान द्यावयाचे आहे. मी पाहिले की, राहुरी, मुंबईतसुद्धा कशा प्रकारचे असे लोक एकदम उठून वर आले आणि ते स्वतःला खूप महत्त्वपूर्ण समजू लागले, मग तिथे आरती होत नव्हती, फोटो पुसला जात नव्हता, तरी बरं फोटो नाही लावले. आपलेच घोडे पुढे दामटत. कोणाला काही विचारायचे नाही. आपण करणार. मग भांडणे सुरू झाली. ग्रुप्स तयार झाले कारण ज्या सूत्रामध्ये तुम्ही बांधले गेले आहात ते तुमच्या आईचे सूत्र आहे आणि त्याच सूत्रामध्ये आपण बांधून रहा आणि पूर्ण वेळ हे समजून घ्या की आपण एकाच आईची लेकरे आहोत.

आमच्यामध्ये ना कोणी उच्च ना कोणी नीच, ना आपण काही कार्य करत असतो. हे चैतन्यच सर्व कार्य करते. आम्ही काही करतच नाही. ही भावना जेव्हा येते, की 'आम्ही मोठे आहोत, आम्ही हे केले, आम्ही ते करू, हे करू,' तेव्हा परम चैतन्य म्हणते, 'तुला जे करायचे आहे ते कर, जेथे जावयाचे आहे तिथे जा हवे तर नरकात जा, हवे तर स्वतःला नष्ट कर, स्वतःचा सर्वनाश कर.' ते आपल्याला थांबवणार नाहीत कारण स्वातंत्र्याला ते मानतात. आपल्याला स्वर्गात जायचे असेल तर त्याचीही व्यवस्था आहे.

पण सहजयोगामध्ये आणखी एक मोठा दोष आहे, आपण एक सामूहिक विराट शक्ती आहोत. आपण एकच आहोत. सर्व एकाच शरीराचे अंग-प्रत्यंग आहोत. त्यामध्ये जर कोणी एक असा झाला किंवा दोनचार असे झाले की आपला ग्रुप तयार करतील, तर ज्याप्रमाणे कॅन्सरची मॅलिग्रन्सी असते, की एकच पेशी वाढू लागते, वेगळ्या प्रकारे, त्याप्रमाणेच एक व्यक्ती वाढून सान्या सहजयोगाला ग्रासू शकते आणि आपली सारी मेहनत व्यर्थ जाते. आपल्याला तर सागरापासून शिकले पाहिजे, जो सर्वात खाली असतो, सर्व नद्यांना आपल्यामध्ये सामावून घेतो आणि स्वतःला तापवून घेऊन वाफ तयार करून सान्या दुनियेवर पावसाचे वरदान पाठवितो. त्याची जी नम्रता आहे तीच त्याच्या गहनतेचे लक्षण आहे. परत तीच वर्षा नद्यांमधून धावत जावून त्याच समुद्राकडे जाते. जेव्हा आपल्यामध्ये नम्रता व प्रेम येईल तेव्हाच आपण या समुद्राप्रमाणे विशाल होऊ, पण आपलेच महत्त्व करायचे, स्वतःलाच विशेष समजायचे, यामुळे सर्वात वाईट गोष्ट ही, की परमचैतन्य आपल्याला सांगून टाकेल की 'जा.' मग आपण एका बाजूला फेकले जाल. ती माझ्यासाठी दुःखकारक गोष्ट असते. असे लोक जे विचार करतात की 'आम्ही हे कार्य केले, ते कार्य केले' त्यांनी पटकन मागे होऊन पाहिले पाहिजे, की आम्ही ध्यान करतो का? आमचे ध्यान लागते का? आम्ही किती गहनतेमध्ये आहोत? आम्ही कशाकशावर प्रेम करतो, किती जणांवर प्रेम करतो आणि किती जणांशी दुश्मनी करतो. सहजयोगामध्ये काही लोक खूप गहनतेत आहेत. काही अजून किनाऱ्यावरच डोलताहेत. ते कधी फेकले जातील ते सांगू शकत नाही.

मी आपल्याला आधीच सांगितले आहे, की १९९० नंतर एक नवीन दालन उघडणार आहे आणि एक नवीन उडी आपल्याला मारायची आहे. ज्याने आपण या नवीन मोहोळात उतरून त्या नव्या गोष्टीला पकडू शकू. सहजयोगाची प्रगती वीस वर्षांची होणार आहे आणि यात टिकून राहण्यासाठी पहिली गोष्ट आपल्यामध्ये पावित्र्य आले पाहिजे. जे नम्रतेने भरले आहे. जर आपण एकदम स्वच्छ आणि पवित्र असाल तर आपल्याला कोणालाही शिवून, कोणाशीही बोलून अपवित्रता येणार नाही कारण आपण प्रत्येक गोष्टीला शुद्ध करतो. आपला स्वभावच शुद्ध करण्याचा आहे. आपण ज्याला भेटाल त्याला शुद्ध करीत जाल. त्यात घाबरण्याची काय गोष्ट आहे? त्यात दुसऱ्याला धिक्कारण्याची काय गोष्ट आहे? तर मग आपली पवित्रता कमी आहे. जर आपली पवित्रता संपूर्ण आहे तर, त्या पवित्रतेमध्येसुद्धा शक्ती व तेज आहे. ती इतकी शक्तिशाली आहे, की कोणत्याही अपवित्रतेला खेचून घेऊ शकता. जशी प्रत्येक प्रकारची गोष्ट समुद्रामध्ये एकाकार होऊन जाते.

आता दुसरे लोक आहेत जे फक्त स्वतःच्या प्रगतीचा विचार करतात. ते असा विचार करतात, की 'आम्हाला दुसऱ्यांशी काय करायचे आहे? आम्ही आमच्या खोलीत बसून श्री माताजींची पूजा करतो आम्ही त्यांना मानतो, आमचा जगाशी काही संबंध नाही' आणि दुसऱ्यापासून वेगळे राहतात. आपण एका शरीराचे अंग-प्रत्यंग आहोत. मग आपण म्हणाल, 'माताजी, मी इतकी पूजा करतो, इतके मंत्र म्हणतो, इतके काम करतो मग माझी अशी स्थिती का?' कारण आपण त्या सामूहिक शक्तीपासून दूर गेलात. सहजयोग सामूहिक शक्ती आहे तेव्हा दोन्ही गोष्टींकडे लक्ष दिले पाहिजे की आपण आपली शक्ती सांभाळणे आणि सामूहिकता घडवत जाणे तरच आपल्यामध्ये पूर्ण संतुलन येईल.

मी असे लोक पाहिले आहेत, ज्यांनी सहजयोगासाठी खूप कार्य केले, बरेच चांगले बोलत होते, भाषण देत

होते आणि आपल्या भाषणाची टेप तयार केली. मग लोकांना सांगू लागले, आपण माझी टेप ऐका. मग लोक आमची टेप सोडून त्यांची टेप ऐकू लागले. त्यांची अशी स्थिती झाली, की ते आमच्या फोटोला तर नमस्कार करायचे पण आम्हाला नाही कारण त्यांना फोटोची सवय झाली होती. मग त्यांनी स्वतःचे फोटो छापले. ते फोटो सर्वांना दाखवू लागले. अशाप्रकारे आपलेच महत्त्व वाढवू लागले. करता करता अशा खड्ड्यात पडले आणि मग सुटून गेले सहजयोगातून, असे लोक का निघाले? कारण संतुलन नाही आणि संतुलन नसल्यावर माणूस उजवीकडे किंवा डावीकडे जातो.

दोन प्रकारच्या शक्त्या आपल्या आतमध्ये आहेत. ज्यायोगे आपण सहजयोगाकडे खेचलेही जातो आणि दुसरी शक्ती ज्यामुळे आपण बाहेर फेकले जातो. बरं, परत लोक कमी झाले, तर यामध्ये सहजयोगाचे नुकसान तर झाले नाही. यामध्ये त्यांचेच नुकसान झाले. जर आपल्याला फायदा करून घ्यायचा आहे, तर या गोष्टीला समजून घ्या की सहजयोगाला आपली गरज नाही. आपल्याला सहजयोगाची गरज आहे.

‘योग’ याचा दुसरा अर्थ होतो युक्ती. एक अर्थ आहे, की संबंध जोडला जाणे, दुसरा आहे की युक्ती. पहिली तर युक्ती ही की आम्हाला याचे ज्ञान झाले पाहिजे. ज्ञानाचा अर्थ बुद्धी नव्हे. युक्ती म्हणजे आमच्या बोटांमध्ये, हातामध्ये, आतमध्ये कुंडलिनीचे पूर्णपणे जागरण होणे हे ज्ञान आहे. मग आणखीसुद्धा ज्ञान होऊ लागते. या ज्ञानामुळे आपण लोकांची कुंडलिनी जागृत करू शकतो. त्यांना समजावू शकतो. त्यांच्याशी पूर्णपणे आपण एकाग्र होऊ शकतो. त्यांच्याशी आपण वार्तालाप करू शकतो. तर आपल्याला यामुळे बौद्धिक ज्ञानसुद्धा येते. आपल्याला सहजयोग समजतो. नाही तर आधी कोण समजू शकत होते? कबीर, नानकजींच्या गोष्टी कोणी आधी समजू शकत होते का? आपले बुद्धिचातुर्य वाढते. अगम्य गोष्ट गम्य होते.

दुसरी युक्ती काय आहे? ती ही की आपण आमच्यावर भक्ती करतां. ती भक्तीसुद्धा जेव्हां तुम्ही करता तेव्हा अनन्य भक्ती करता. तादात्म्यामध्ये आपण आमच्याशी जोडले जाता. जसे आम्हाला वाटले तसेच आपल्याला वाटू लागते. आज उशीर झाला तर आम्हीसुद्धा असे सांगू शकतो, की आम्ही खूप थकलो. आमच्याने होणार नाही. पण आम्ही असा विचार केला नवरात्री आहे, रात्रीत करावे आणि तोच मुहूर्त आम्हाला मिळावयाचा होता. तर आम्हाला करायचेही आहे आणि अत्यंत आनंदात आम्ही करीत आहोत. आम्ही थकलो आहोत, आरामही केला नाही असा विचारही आम्ही करीत नाही आणि आपल्यालासुद्धा असा विचार केला पाहिजे की हीच वेळ श्री माताजींनी ठरविली आहे कारण हीच वेळ आमच्यासाठी उचित आहे, पूजेसाठी. पण अर्धेअधिक लोक उलट्या गोष्टींचा विचार करतील. आम्ही सकाळपासून बसलो आहोत. आम्हाला भूक लागली, मुले झोपली असतील. तर ती अनन्य भक्ती नाही कारण माझा जो विचार आहे, तो आपल्या विचारामध्येच आहे, कोणासाठी मी विचार करते? जर ‘श्री माताजी, हे इतके खराब आहे, असे आहे.’ मी म्हणते, ‘नाही हो, एकदम चांगले आहे.’ मी विचार करते, मी जे बघू शकते ते हे का बघू शकत नाहीत, तर मग अनन्य नाही झाले, अन्य झाले, दुसरे झाले.

अशातऱ्हेने जसे तुमच्याबद्दल आमचे प्रेम आहे, आपणही सर्वांबद्दल तसेच प्रेम जोपासा. जर ही गोष्ट आपल्यामध्ये नाही तर ते अन्य आहे, अनन्य नाही. जर आमच्याच शरीराचे अंग-प्रत्यंग आहे तर जसे आम्ही

आहोत तसेच त्यांना झाले पाहिजे. जसा आम्ही विचार करतो तसाच विचार आपल्याला केला पाहिजे. तर हे वेगळा विचार का करतात? उलट्या गोष्टीचा विचार का करतात? जे विहिरीत आहे तेच घड्यामध्ये यायला पाहिजे हेच प्रेमाचे स्रोत आहे. दुसरी गोष्ट कशी येऊ शकेल? आणि जेव्हा दुसरी गोष्ट येते तेव्हा मी विचार करते की त्यांनी आणि कोणत्या दुसऱ्या विहिरीतले पाणी भरले आहे. हा घडा माझा नाही.

आता दुसरी गोष्ट म्हणजे 'श्री माताजी आम्ही आपल्याला शरणागत आहोत.' जर तुम्ही शरणागत आहात तर आम्ही तुम्हाला काही सांगितले किंवा कोणतीही गोष्ट समजाविली किंवा आपल्यासमोर कोणताही प्रस्ताव ठेवला, काही ठेवले, तर त्याला नाकारण्याचा प्रश्नच कसा उद्भवेल? पण आपण आणि आम्ही एक झालो तर त्यांचा प्रश्नच कसा उद्भवेल? श्री माताजींनी सांगितले ते सांगितले, आम्ही 'श्री माताजी'च झालो तर आम्ही नाही कसे म्हणू शकणार? तर आपल्यामध्ये हे तादात्म्य नाही आले तर ही दुसरी युक्ती आहे, की 'श्री माताजी, माझ्या हृदयात आपण या. माझ्या बुद्धीमध्ये आपण या. माझ्या विचारांमध्ये आपण या. माझ्या जीवनाच्या प्रत्येक कणामध्ये आपण या. आपण जिथे सांगाल तिथे आम्ही हजर आहोत, हात जोडून.' पण आपल्याला सांगावं तर लागेल ना! आणि पूर्ण हृदयासह, कुठल्या मतलबाने, कारणाने नाही.

तिसरी गोष्ट. आम्ही हे काम करतो आहोत. आम्ही सहजयोगाचे हे काम केले. आम्ही ही सजावट केली, ठीक-ठाक केले. मी केलं, तर सहजयोगी आले नाहीत. सहजयोगामध्ये आपले सर्व कर्म 'अकर्म' झाले पाहिजे. जेव्हा आपण सूक्ष्मस्तरामध्ये पहाल, तर आपण पहाल की 'काय, मी असा विचार करतो कां की मी केलं.' अशी गोष्ट माझ्या मेंदूत येतेच कशी? याचा अर्थ माझा योग पुरा झाला नाही. जेव्हा योग पूर्ण होतो तेव्हा तुम्ही अकर्मात उतरता. जसे हे घडते आहे, ते घडते आहे, अशा तऱ्हेने आपण बोलू लागता. तेव्हा आपल्याला पूर्णपणे तादात्म्य प्राप्त झाले.

तिसरी युक्ती जी शिकली पाहिजे ती अशी की जिथे मी काही करीत आहे, मी काय करीत आहे, जो पर्यंत आपण आपले कार्य शोधित होता तोपर्यंत आपण काही करत होता कारण आपल्यामध्ये अहंभाव होता. जेव्हा आपण सामुदायिकतेमध्ये आलात तेव्हा आपण काही करीत नसता. आपण अंग-प्रत्यंग आहात आणि ते कार्य होत आहे.

या युक्त्या मी यासाठी सांगते आहे कारण की झेप घ्यायची आहे. याप्रकारे नेहमी आपण आपले विवेचन करावे आणि स्वतःकडे दृष्टी टाकून पहावी की 'मी काय विचार करतो आहे, मी दुसऱ्यांसाठी काय विचार करतो आहे. ते माझ्यापेक्षा श्रेष्ठ आहेत. त्यांच्याकडून मला शिकले पाहिजे. त्यांचे चांगले गुण दिसतात की फक्त वाईटच गुण दिसतात.' दुसऱ्यांचे चांगले गुण दिसत असतील आणि स्वतःचे वाईट गुण, तर फार चांगली गोष्ट आहे. ही युक्ती समजून घेतली पाहिजे, की यात जर आम्ही डामडौलात आहोत तर ते स्वतःमुळेच आहोत. सहजयोग तर खूपच महान गोष्ट आहे, पण आमच्यामध्ये जो वाईटपणा येत आहे किंवा याची मजा पूर्णपणे आम्ही लुटू शकत नाही याचे कारण आमच्यामध्ये काही ना काही दोष आहेत. या युक्तीला जर आपण व्यवस्थितपणे केले तर फक्त आनंद मिळेल, निरानंद. आणि काही नाही. आणि मग पाहिजे तरी काय? आपले रूपच बदलून जाईल.

आणि आज या जन्मदिनी मी इच्छा करते की, आपले जन्मदिवससुद्धा साजरे व्हावे. आजपासून आपण या युक्त्या समजून घ्याव्या आणि स्वतःला अशा पावित्र्याने ओतप्रोत करा जसे काही श्री गणेश. पवित्रतेमुळे माणसामध्ये सुबुद्धी येते कारण पवित्रता प्रेमाचेच नाव आहे. सुबुद्धीचा अर्थ प्रेमच आहे. सर्व गोष्टींचा अर्थ प्रेम आहे आणि जर आपण सुबुद्धी प्राप्त करू शकत नाही आणि प्रेमाला आपलेसे करू शकत नाही तर सहजयोगात येऊन आपला वेळ व्यर्थ घालवणे आहे. या वेळी अशी काही वेळ घटीत होते आहे की सर्वाना यामध्ये सामावले गेले पाहिजे. आणि स्वतःला परिवर्तनामध्ये घातलेच पाहिजे.

परिवर्तित आपल्याला झालेच पाहिजे. वाईट गोष्टी आमच्यामध्ये आहेत. आम्हाला स्वतःला पूर्णपणे पवित्र करावयाचे आहे. या परिवर्तनाचे फलस्वरूप आशीर्वाद आहे-ते जीवन, ज्याचे वर्णन केले जाणे अशक्य-जे कबीरांनी सांगितले - 'अब मस्त हुए, फिर क्या बोले।'

तर आपण त्या आनंदामध्ये या. त्याला प्राप्त करा. त्या आनंदामध्ये आनंदित व्हा. हा माझा आशीर्वाद!